Indian Scholar
ISSN 2350-109X
www.indianscholar.co.in
An International Multidisciplinary Research e-Journal

संगीत में लय एवं ताल की महत्ता

शुभम वर्मा
202–बी, रोहिणी विला
पत्रकारपुरम, कानपुर–208002

गायन, वादन एवं नृत्य की त्रिवेणी ही संगीत है। इन तीनों कलाओं के मूल आधार स्वर एवं लय हैं। वास्तव में ये दोनों ही संगीत के आधार स्तम्भ हैं। एक कलाकार इन्हीं दोनों का आश्रय लेकर संगीत में सृष्टि करता है। स्वर का प्रयोग रागों में किया जाता है एवं तालों में लय का प्रयोग किया जाता है। अतः हम कह सकते हैं कि संगीत में लय और ताल की अत्यन्त महत्ता है तथा दोनों को संगीत से पृथक नहीं किया जा सकता है। लय एवं ताल के बिना संगीत में कोई मधुरता व रंजकता की कल्पना करना असम्भव है। तालयुक्त संगीत या निबद्ध संगीत सामाजिक होता है तथा ताल विहीन या अनिबद्ध आरण्यक संगीत होता है।

लय संगीत का आधार है व स्वर की उत्पत्ति लय के बिना असम्भव है तथा संगीत को इसके बिना अनुशासित नहीं किया जा सकता है। लय का अस्तित्व सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में है। संसार की सम्पूर्ण गतिविधियाँ एवं क्रियाकलाप एक लय में ही निबद्ध होते हैं। मनुष्य के हृदय, नाड़ी तथा श्वांस की गति लयपूर्ण है। पूरे आकाश के सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्र आदि सभी की गति नियंत्रित है। लय हमेशा गतिशील हैं। इसमें चेतनता है तथा सातत्यता है। गायन, वादन एवं नृत्य तीनों में समय के निश्चित माप को लय कहा जाता है। लय का साधारण अर्थ है गति। शारंग देव के अनुसार, ''क्रियान्तर विश्रान्तिर्लय''[1] अर्थात् ताल क्रिया के बाद होने वाली विश्रान्ति ही लय है।

लय का स्थान प्रकृति व मनुष्य दोनों में है परन्तु प्रकृति की लय समान होती है। मनुष्य की लय घटाई, बढ़ाई जा सकती है। एक संगीतकार अपनी कला साधना के आधार पर भिन्न–भिन्न लयकारियों को प्रदर्शित करता है। लय का सम्बन्ध संगीत में प्राचीन काल से चला आ रहा है। लय का शाब्दिक अर्थ है एकरूपता। सामान्य जनता लय प्रधान संगीत को अत्यन्त रुचि से सुनती है, इसी कारण से लोक गीतों और जनजातियों के संगीत में लय प्रधान संगीत होता है। चौंसठ कलाओं का आश्रय लय ही है। लयविहीन स्वर संगीत कला की दृष्टि से अधूरा होता है। लय अनन्त व व्यापक है, परन्तु विद्वानों ने प्रमुख रूप से तीन लयों की रचना की है– विलम्बित, मध्य एवं द्रुत लय।

जैसे मनुष्य के शरीर में प्राण अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं वैसे ही संगीत में ताल का

स्थान है। ताल के बिना संगीत निर्जीव हो जाता है। ताल की सत्ता संगीत की तीनों विधाओं में निहित है। ताल संगीत को एक निश्चित नियम के बंधन में बाँधता है। वस्तुतः ताल ही संगीत को एक दिशा प्रदान कर उसके व्यवस्थित रूप को गति देता है एवं चमत्कार से श्रोतागणों को आत्मविभोर कर देता है। ताल लय के असीमित समुद्र में खो जाने से बचाने वाला तत्व है। कुछ विशिष्ट मात्राओं का चयन कर मृदंग, पखावज या तबले के वर्णों से गूंथकर ताल को निर्मित किया जाता है। लय एवं ताल एक सिक्के के दो पहलू हैं। संगीत में छन्द एवं ताल ही निश्चित रूप से गतिशील बनाते हैं। काल क्रिया के माप को ही ताल कहते हैं। अमरकोष के अनुसार, ''तालः काल क्रियामानम्''[2]। तालों में गतिभेद उत्पन्न कर रस–निष्पत्ति सम्भव होती है।

ताल संगीत के मूल्यांकन का एक शक्तिशाली साधन है। तालविहीन संगीत कच्चे आम की तरह है तथा निबद्ध या तालयुक्त संगीत मुरब्बे की तरह आनन्ददायक होता है। 'भक्ति रत्नाकर' में श्री नरहरि चक्रवर्ती ने तालविहीन संगीत के विषय में कहा है–

''गीते तालयुक्त तालबिना शुद्धि नय।
जैछे कर्णधार बिना नौका तैछे हय।।''[3]

अर्थात् जिस प्रकार बिना पतवार के नाव होती है वैसे तालविहीन संगीत पूर्ण संगीत नहीं है।

संगीत में ताल का जन्म साहित्य में छन्द की तरह स्वाभाविक रूप से हुआ। लय की स्वाभाविक गतियों के कारण ताल का बंधारण हुआ। भारतीय संगीत के तीन उपकरण– स्वर, पद और ताल। इन तीनों में से ताल का विशिष्ट स्थान है। इसी कारण ताल का पूर्ण ज्ञान गायक तथा वादक के लिए आवश्यक माना गया है। ताल को न जानने वाला गायक या वादक कहलाने के योग्य नहीं है। इस संदर्भ में भरत ने स्पष्ट रूप से कहा है–

''यस्तु तालं न जानाति न सः गाता न वादकः
तस्मातृ सर्वप्रयत्नेन कार्य तालावधारणम्।।''[4]

ताल से लय पक्ष अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है जहाँ ताल है वहाँ लय होना स्वाभाविक है। ताल के महत्वपूर्ण आधार होने के नाते इसकी गणना ताल हेतु आवश्यक दस प्राणों के अन्तर्गत की गयी है। ताल के ये दस प्राण– काल, मार्ग, क्रिया, अंग, ग्रह, जाति, कला, लय, यति, प्रस्तार हैं। इनमें भी लय की अपनी विशिष्ट भूमिका है जिसके अभाव में ताल की रचना सम्भव नहीं है। ताल का निर्माण विभिन्न मात्राओं, ताली, खाली विभाग आदि के समागम से होता है। ताल में लय रुधिर की तरह अपना संचार करती है एवं मात्रा ताली–खाली अनेक अंगों के रूप में अपनी महत्ता रखते हैं। ये सभी मिलकर पुरुषाकृति का निर्माण करते हैं। यही भाव निम्न श्लोक में वर्णित हैं–

''लय शोणित रुपेण, मात्रा नाडी स्वरूपतः

घाता अवयवाश्चैव तालौ वै पुरूषाकृति।।''[5]

संगीत रचना में विभिन्न रसों के उत्पादन में ताल तत्व सहायक सिद्ध होते हैं। लय एवं ताल का सीधा सम्बन्ध माना गया है। संगीतज्ञ विभिन्न तालों का आधार लेते हुए विभिन्न रसों को उत्पन्न करने में समर्थ होते हैं जैसे विषम गति वाली ताल–दीपचन्दी, झपताल, रूपक आदि श्रृंगार, करूण एवं शोक के भाव को व्यक्त करती है। दादरा, कहरवा, तीनताल आदि तालें शान्त भाव व श्रृंगार रस में सहायक होती है। अद्भुत रस का ज्ञान टप्पा ताल द्वारा तथा खुले बोल वाली तालें जैसे–चारताल, धमार, सूलताल वीर एवं भक्ति रस उत्पन्न करने में सहायक होती हैं।[6]

अतः अन्त में हम यह कह सकते हैं कि लय व ताल के उचित मिश्रण के अभाव में संगीत हमेशा अपूर्ण ही रहेगा। लय एवं ताल की महत्वपूर्ण भूमिका के माध्यम से संगीत को प्रभावशाली एवं सौन्दर्यपूर्ण बनाया जा सकता है और इन्हीं दोनों के समन्वय से संगीत में रंजकता एवं रोचकता का भाव उत्पन्न होगा। संगीत में जितना महत्वपूर्ण स्थान स्वर का है उतनी ही महत्ता लय और ताल की भी है। वास्तव में ताल व लय संगीत रूपी इमारत की नींव के शक्तिशाली पत्थर हैं। लय व ताल का पूर्ण ज्ञान रखने वाला मनुष्य ही संगीत के समुद्र में डूबकर अपने गन्तव्य तक सुगमतापूर्वक पहुँच सकता है। ये दोनों तत्व ही भारतीय संगीत के प्राण हैं।

संदर्भ–

1. पं0 शारंगदेव–संगीत रत्नाकर
2. पं0 अमर सिंह–अमरकोष
3. श्री नरहरि चक्रवर्ती–भक्ति रत्नाकर
4. आचार्य भरतमुनि–नाट्यशास्त्र
5. पं0 विजय शंकर मिश्र–तबला पुराण
6. संगीत पत्रिका, मार्च 1990